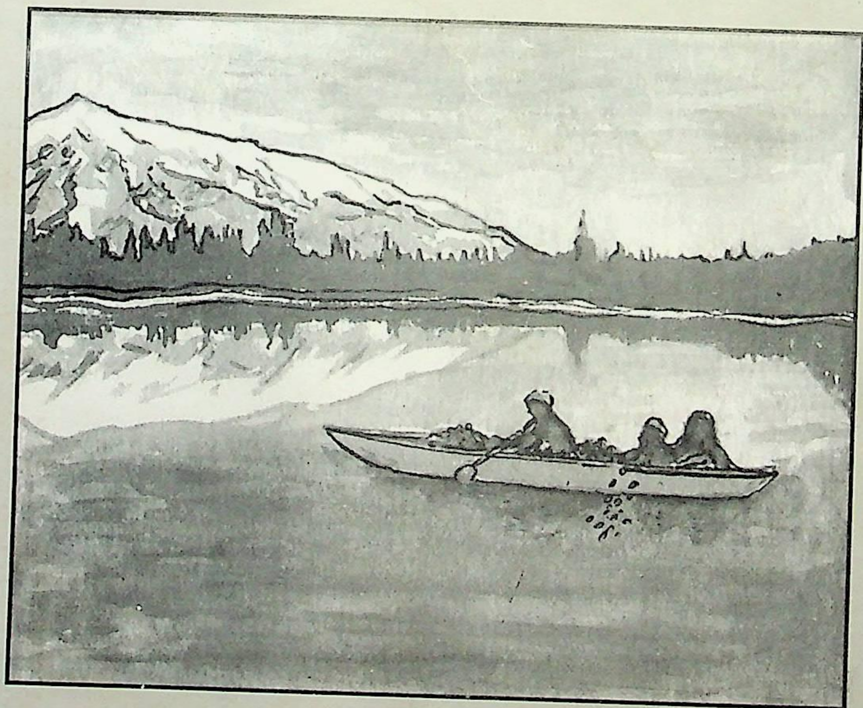
श्री नदी

(खण्ड काव्य)



पृथ्वीनाथ 'मधुप'

आधुनिक भाव–बोध से सम्पन्न पृथ्वीनाथ 'मधुप', जम्मू–कश्मीर के वरिष्ठ साहित्यकार हैं। जातीय बोध, लोकाई एवं प्रयोग का अद्‌भुत सुमेल उनमें है। कश्मीरी मिथक से आगे बढ़कर जन–संस्कार तक व लोक–मुहावरे से लेकर खान–पान, पहनावे इत्यादि तक उनका शेध कार्य चलता रहा है। इस क्षेत्र में, इस तरह का खंड–काव्य देने वाले भी वह पहले कवि हैं। आज जब सभी कश्मीर–समस्या का दोनों हाथों से दोहन कर रहे हों, उस समय में एक पुरातन–कथा में जाकर वह मौजूदा समस्याओं से टकराए हैं। वितस्ता एक संस्कार की तरह कश्मीरी समुादाय का अंग है। नवीं सदी में, महाराज अवंति वर्मा के काल में वितस्ता तथा महापद्‌म सरोवर के कारण हुई तबाही का ज़िक्र कल्हण की 'राजतरंगिणी में मिलता है। यह भी चर्चा का विषय रहा है कि कैसे एक अछूत (स्त्री) द्वारा पोषित युवक सुय्य (अभियंता) ने लोगों को विनाश से बचाया और अन्न के अनंत द्वार उनके लिए खोलने हेतु बांधों का निर्माण किया। इसी कथा को खंड काव्य का विषय बनाते हुए 'मधुप' **बहा ले गयी धार/गंदगी/जो छाई थी** के संदेश को प्रसंगिक कर जाते हैं। विषय–वस्तु की नाटकीयता एवं पानी के अरराते/हहराते स्वरों की भाषा उन्हें कहीं धर्मवीर भारती की परम्परा में स्थापित भी करते हैं।

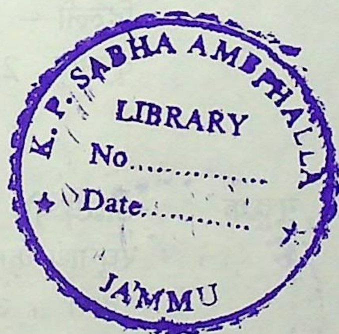
इस खंड–काव्य से तात्कालिक कश्मीर के भौगोलिक परिदृश्य का तो परिचय मिलता ही है, किसी अछूत बालक के ज्ञान–अर्जन की बात चौंकाती भी हैं। यहीं वह बीज–सूत्र भी स्थापित होता है जहां पर ज्ञान किसी विशिष्ट–जाति का मोहताज नहीं है। निर्माण के केंद्र में सुय्य की उपस्थिति, द्वंद्व को उठाती हुई कई मान्यताओं का ध्वंस कर जाती है। 'दिखा गई पथ युवा शक्ति सबको शिवता का, एक तरह से कर्म पक्ष को स्थापित ही करती है। जिस समय कश्मीर के अधिकांश हिंदी कवि, एक गले आ पड़े नौस्टैल्जिक–भाव सहित दूर से ही स्टेटमैंट–दर–स्टेटमैंट दागते हुए, दरहकीकत आज की स्थितियों का स्व–शैली संग साधारणीकरण करने में ही मुग्ध–भाव से जुड़े–जुटे हों तो ऐसी रचनाएं न केवल जड़ों को जानने में सहायक बनती हैं, एक उत्साह का संचार भी करती हैं। मधुप की कविता उनके अनुभवों का विस्तार है। संभवतः इसीलिए वह कविता को उत्कृष्ट बनाने के लिए शिल्प के किसी अतितिरक्त मोह के शिकार नहीं हैं, ठीक तभी वह अपनी पृष्ठभूमि पे खड़े सार्वजनिकता को संबोधित हो पाते हैं। यहीं उनके सरोकार आदमी से, आदमी की बेहतरी से जुड़ते हैं। वह आज को बचा लेना चाहते हैं। जो घटित हो गया है उसके तमाम सूत्रों को समझा देना चाहते हैं। पराजित बना दी गयी एक क़ौम को क्षमता की ओर सरकाते हैं। संकल्प का मूल मंत्र थमाते हैं। ठीक यहीं, ऊंच नीच के पात्रता–भेद से परे शक्ति उपस्थित होती है जो नूतन तो है ही, मंगलता का वातावरण भी रचती है।

–मनोज शर्मा



रुकी नदी

(खण्ड़ काव्य)



प्रथम संस्करण : 1999

आवरण : टी॰ के॰ शिशु

प्रकाशक : यात्री प्रकाशन
बी–131, सादतपुर,
दिल्ली – 110094
दूरभाष : 2269962

मुद्रक : डी॰टी॰पी॰ पीपुल
रघुनाथ कम्प्लेक्स, कच्ची छावनी, जम्मू।
द्वारा ... अरुण आर्ट प्रेस
न्यु प्लाट, जम्मू।

मूल्य : 75.00 रुपये मात्र

Ruki Nadi (A long poem) by **Prithvi Nath Madhup**

पण्डित त्रिलोकी नाथ जी
खोसा, अध्यक्ष कश्मीरी
पंडित सभा को कवि की
ओर से सादर।

15/11/2000

रुकी नदी

(खण्ड़ काव्य)

पृथ्वीनाथ मधुप

प्रकाशक : यात्री प्रकाशन, दिल्ली।

विषय सूची

अतीत के आईने में वर्तमान का प्रतिबिम्ब

कल्हण, जोनराज, श्रीवर तथा प्राज्यभट्ट की राजतरंगिणियों में सुरक्षित कश्मीर का प्राचीन इतिहास इस देश की अमूल्य निधि हैं जिस ने पाश्चात्य विद्वानों की इस धारणा को खण्ड़ित कर दिया है कि प्राचीन भारतीय इतिहास लिखना नहीं जानते थे। चार शताब्दियों तक एक ही शीर्षक के अन्तर्गत इस भूमि का क्रमबद्ध इतिहास लिखा जाता रहा, यह विश्व को चकित करने वाली बात है। कश्मीर वासियों को अपनी इस बहुमूल्य थाती के महत्त्व को पहचानना आवश्यक है क्योंकि इसी में उन का सुख–दुःख भरा अतीत, गौरव गाथाएं और व्यथाभरी कथाएं निहित हैं। इस इतिहास में केवल राजाओं के जन्म–मरण और विजयों का विवरण नहीं, सामान्य जनता की वास्तविक स्थिति का भी अंकन है। यह इतिहास एक ओर हमारे गौरव की गाथा गा कर हम में स्वाभिमान जागृत करता है तो दूसरी ओर हमारी पूर्वकृत भूलों दुर्बलताओं को उजागर कर हमें भविष्य के लिए सचेत भी करता है।

साहित्य साधना में संलग्न **श्री पृथ्वीनाथ मधुप** ने इसी इतिहास के पन्नों से एक छोटी सी अविस्मरणीय घटना को लेकर

''**रुकी नदी**'' खण्ड़काव्य की रचना की है जिसके लिए वे बधाई के पात्र हैं।

नवमशती में कश्मीर में महाराज अवन्तिवर्मा के राज्यकाल में दैवयोग से प्रकृतिप्रकोप ने वितस्ता नदी के प्रवाह को अवरुद्ध कर दिया। यक्षदर (वर्तमान खादनयार गांव के पास द्यारुँमुल) से चट्टानें खिसक कर वितस्ता में आ गिरीं और रुकी नदी ने प्रदेश में भंयकर बाढ़ की स्थिति उत्पन्न कर दी। महापद्मसरोवर (वर्तमान वुल्लर झील) से लेकर विजयेश्वर (वर्तमान बिजबिहाड़ा) तक की भूमि ने समुद्र – सा रूप धारण कर लिया। खेती की भूमि जलमग्न हो गई। अन्न के अभाव में लोग भूख–प्यास से तड़प–तड़प कर मृत्यु का ग्रास बनने लगे। जनता में यह अन्धविश्वास प्रबल हो उठा कि एक महादैत्य वितस्ता नदी के तल में छिप कर बैठा है जो सभी को अपना ग्रास बनाना चाहता है। लोग अपने गांव–नगर छोड़कर दूर भागने लगे। महाराज और मन्त्री गण विवश हो कर काल का नर्तन देख रहे थे परन्तु किसी को कोई उपाय नहीं सूझ रहा था। तभी गुप्तचरों ने महाराज को सूचना दी कि एक बातूनी युवक बार बार जनगोष्ठियों में कहता फिरता है कि जलप्लावन दूर करने की बुद्धि तो मेरे पास है पर साधनहीन मैं ग़रीब क्या करूं। महाराज को यह भी सूचना मिली कि वह युवक सुय्य एक चाण्ड़ाली सुय्या द्वारा पालित पुत्र है। सड़क साफ करती हुई उस ने कई वर्ष पूर्व एक मिट्टी के पात्र में रखे नवजात शिशु को सड़क किनारे पड़ा देखा तो उसे वक्षस्थल से लगा लिया। निर्धनता की स्थिति में भी उस ने उस शिशु को पाला–पोसा और पढ़ाया जिस से वह अध्यापक बन गया। महाराज द्वारा बुलाये जाने पर उसने राजकोष से धन ले कर मड़व राज्य पहुंच कर नाव से बहुत से दीनार पानी में डूबे नन्दक गांव में फैंक दिये लोगों ने उसे पाग़ल समझा। फिर क्रमराज्य पहुंच कर उसने यक्षदर स्थान पर दीनार फैंके। दुर्भिक्ष पीड़ित लोगों ने दीनार निकालने के लोभ से वितस्ता से

पत्थर निकालने शुरू किये जिस से उस का प्रवाह चालू हो गया। बुद्धिमान् अभियन्ता के रूप में उस ने वितस्ता के दोनों ओर बांध बनाया ताकि पुनः शिलायें वितस्ता के प्रवाह को अवरूद्ध न कर सकें। सिन्धु और वितस्ता के प्रवाह को मोड़कर नये स्थान पर उनका संगम करवाया। महापद्मसरोवर के जल को भी उसने नियन्त्रित किया। पालियों से जल रोक कर सुय्य ने स्थान स्थान पर कुण्ड सदृश गांव बनाये। आज भी कश्मीर में कई गांव कुण्ड (जैसे मर कुण्ड काज़ी कुण्ड आदि) कहलाते हैं। जोनराज ने सुय्यकुण्डल तथा जैनकुण्डल गांवो का उल्लेख किया है। कल्हण के अनुसार सुय्य ने अपनी मां सुय्या के नाम पर ही सुय्य कुण्डल गांव तथा सुय्या सेतु का निर्माण करवाया था। इस प्रकार अपने बुद्धिचातुर्य से सुय्य ने जनता को कष्टों से उभार दिया। दो सौ दीनार प्रति खारी बिकने वाले धान का मूल्य छत्तीस दीनार प्रति खारी हो गया। लोग अपने अपने घरों को सकुशल लौट गये और अनेक नये गांवों का निर्माण हुआ। कल्हण ने सुय्य की प्रशंसा में कहा है कि भगवान् विष्णु ने तो चार जन्म लेकर जल से भूमि का उद्धार, (वारह अवतार के रूप में) द्विजों को भूमि समर्पण, (परशुराम अवतार के रूप में) जल में पोसाणमय सेतु का निर्माण (रामावतार रूप में) तथा कालिय नाग का दमन (कृष्णावतार रूप में) किया था परन्तु सुय्य ने एव. ही जन्म में ये चारों सत्कर्म पूर्ण कर लिये थे।

इस कथासूत्र को आधार बना कर श्री मधुप ने अतुकान्त स्वच्छन्द काव्यशैली में घटनाओं का सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है। बाढ़ का अंकन कितना मार्मिक है :

बाढ़ नहीं यह महाकाल का रूप क्रूरतम
छीन गया/जीवन का आधार/अन्न
अन्न उपजाने वाली खेती

बहालिये/किसान/कितने ही
भूजीवी के बैल/कामधेनुएं
भविष्य की आशायें शिशु बच्चे
कितने वृद्ध/अबलाएं
और दे गया भीषण महामारी
अभाव/भूख/मूल्य वृद्धि
महाकष्टकर

प्रजा की व्यथा को देखकर महाराज अवन्तिवर्मा के मानसिक भावों की अभिव्यक्ति सशक्त है:

धिक्कार मुझे/ कैसा नृप मैं
मैं कैसा प्रजापाल/असमर्थ/विवश/लुंजपुंज/असहाय
दीन/अपनी आंखों जो देख रहा/महानाश
अपने जन/अपनी माटी का

इस नैराश्य में भी शासक का विश्वास है कि :

जनता का/जब तक/साथ रहेगा
नहीं वरेंगे/जब तक/राजपुरुष भ्रष्टता
तब तक कोई भी षड्यन्त्र/शत्रु का
सफल नहीं होने का।

समाज की तत्कालीन परिस्थितियों में आज की परिस्थितियां प्रतिध्वनित–सी होती दिखाई देती हैं। क्षुब्ध हुआ कवि कह उठता है

इस विशाल सरोवर का जल
जो कल तक मीठा था
आज अचानक बूंद बूंद
इतना कडुवाया/कैसे?

करुण रस का परिपाक इन पंक्तियों में हृदयद्रावक है:

बिलख रहे शिशु/बुरी तरह से
सूखी है/माओं की छाती
बच्चे बिलख-बिलख रोते हैं
उन्हें भूख की पीर सताती
महिलायें विलाप करती है
छाती पीट/पीट सिर अपने
मर्दो की आंखें गीली हैं
बिखर गये सब उन के सपने
ऐसा ठौर न कहीं
जहां की/हाय हाय न करती माटी
त्राहि-त्राहि ध्वनि से आपूरित
आज हिमालय की यह घाटी

ज़बरदस्ती थोपे गये छद्म युद्ध की विभीषिका से पीड़ित कश्मीर की धरती पर आज भी :

कितने यक्षदरों से खिसकी
खिसक रहीं
भारी चट्टानें
इतना पानी बहने पर भी
रुद्ध प्रवाह वितस्ताओं के

इस रुद्ध प्रवाह का समाधान आज भी सम्भव है।
कवि के शब्दों में :

भटक रहे हैं। राजपथों पर
कितने ही सुय्‌य/पाग़ल सनकी
''धीररस्ति में निरर्थस्तु किं कुर्याम्
कहते सुने जा रहे/आज भी

कवि पूछता है:

कब तक/आखिर बोलो कब तक
रहें प्रतीक्षरत/ये सारे
सुन लेंगे क्या
अवन्ति वर्मा?
कौन कहे

कैसे यह जानें

हमें आशा है कि सुय्य की तरह कुशल बुद्धि–जीवियों की राष्ट्रभक्ति युद्ध की चट्टानों को दूर कर शान्ति की वितस्ता के अवरुद्ध प्रवाह को सुचारु रूपेण प्रवाहित कर पाएगी। श्री **मधुप** के कविकर्म की सार्थकता के शुभ कामनायें

-- डॉ॰ वेद कुमारी घई



आधार

नौवीं शताब्दी का कश्मीर।

महाराज अर्वान्त वर्मा (८५६–८८३) राष्ट्रद्रोहियों एवं राष्ट्रविरोधियों को कुचल कर राजकर्म में व्यस्त हैं। महाराज से हर प्रकार की प्रतिभा प्रेरणा एवं सम्मान पा रही है। कलाट भट, रत्नाकर, शिवस्वाभी, रमठ तथा आनन्दवर्धनाचार्य को महाराज का विशेष स्नेह एवं सरपरस्ती प्राप्त है।

दुर्भाग्य! एक रात हिमालय की इस अति सुरम्य घाटी में भूकम्प आता है। वराहमूल (आज का बारामुला) से तीन मील नीचे यक्षदर नाम के एक पर्वत से चट्टानें खिसक आती हैं जो वितस्ता के प्रवाह को रोक देती हैं। जनता में बात फैल जाती है कि किसी दैत्य ने यक्षदर से चट्टानें खिसकाई हैं। वह दैत्य वितस्ता के पानी में छिप कर बैठा है। मौका मिलते ही वह सबको अपना ग्रास बना लेगा। इस भय से आतंकित हो कर आस–पास की जनता अपने गांव–घरों को छोड़कर दूर के गांवों में शरण लेने जाती है।

वितस्ता का पानी बिलकुल रुका होने के कारण जलस्तर बड़ता जाता है और भयानक बाढ़ का रूप ले लेता है। महापद्म सरोवर (आज की वुल्लर झील) अपने इर्द–गिर्द के इलाकों को डुबों देता है। वितस्ता उल्टी ओर बहने लगती है। महापद्म सरोवर से लेकर विजयेश्वर (आज के बिजबिहाड़ा) तक एक छोटा समुद्र सा बन जाता है। खेती के योग्य ज़मीन डूब जाती है। जो थोड़ी – बहुत बचती भी है वह दलदल बन जाती है।

मंहगाई आसमान छूती जाती है। बाढ़ और भूख के शिंकजे में कश्मीरी जनता बुरी तरह से कस जाती है। इनसानों और पशु–पक्षियों के सड़े–गले शव दुर्गन्ध फैलाते हैं। महामारी फैल जाती है।

प्रजावत्सल महाराज किंकर्तव्यविमूढ़ – से हो जाते हैं। लाख समझाने पर भी कोई छिपे दैत्य का ग्रास बन जाने के डर से रुकी नदी से चट्टानें हटाने के लिए तैयार नहीं हो पा रहा है।

ऐसी विषम परिस्थिति में एक चाण्डाली द्वारा पाला–पोसा गया, सुय्य नाम का एक युवक श्रीनगर के राजमार्गो और विद्वानों की गोष्ठियों में बाढ़ की चर्चा होने पर बार–बार यही कहता है मेरे पास इस समस्या को सुलझाने की बुद्धि तो है पर साधन नहीं, मैं क्या करूँ! (कल्हण की राजतरंगिनी, ५:६०) पर, कोई उसकी बात पर विश्वास नहीं करता और उसे पाग़ल तथा सनकी कहकर उसकी बात को टाल देता है।

एक दिन महाराज अवन्ति वर्मा को अपने गुप्तचरों से इस युवक के बारे में पता चलता है। वे उसे अपने पास बुलवाते हैं। दोनों के बीच बाढ़ नियन्त्रण पर गम्भीर चर्चा होती है। युवक की तीक्षण बुद्धि से महाराज काफी प्रभावित हो जाते हैं और इसकी योजना को जस की तस स्वीकार करते हैं तथा इसे शीघ्र ही कार्यरूप देने की

आज्ञा दे देते हैं। सुय्य शर्त रखते हैं कि कोई भी उसके काम में हस्तक्षेप न करे तथा जितना धन मांगा जाए उसे तत्काल दिया जाए। महाराज शर्त को स्वीकार करते हैं।

सभासद तथा कई विद्वान सुय्य का विरोध पाग़ल और सनकी कहकर करते हैं। विरोध का कारण यह भी रहता है कि वह नीच कुल में पैदा हुआ एक चाण्ड़ाली का बेटा है।

युवक सुय्य अपनी योजना के अनुसार काफी स्वर्ण–मुद्राएँ यक्षदर (आज का द्यारुँमुल) तथा नन्दी नामक स्थानों में पानी में फैंक देते हैं। उनके विरोधी महाराज के पास जाकर चुग़ली करते हैं कि अब सुय्य के पाग़ल होने में कोई संदेह नहीं रहा। महाराज पर इस बात का रंचमात्र भी प्रभाव नहीं पड़ता वे उनकी बात को अनसुनी करते हैं।

सुय्य की योजना सफल हो जाती है। सिद्ध हो जाता कि यह नीच कुल में पैदा हुआ ग़रीब युवक अपने समय का एक प्रतिभाशाली एवं प्रबुंद्धतम अभियन्ता है।

तब की और आज के कश्मीर की परिस्थितियों में कुछ समानता का आभास हुआ जो इस प्रबन्ध के लिखने की प्रेरणा बनी।



संभवतः यह पहला प्रबन्ध है जो किसी कश्मीरी मातृभाषी हिन्दी कवि ने स्वतन्त्रता प्रप्ति के बाद लिखा हो।

—मधुप

जम्मू (व्यथुँ त्रुवाह) 1998

प्रकरण : एक

खोते जाते/शब्द अर्थ हैं
अपना – अपना
नहीं रहा पर्याय
देख लो / जल
जीवन का
प्राणाधार नहीं/बन
घातक प्राणों का/यह
रचता है संहार भयंकर
कैसे–कैसे :
बहुत क्रुद्ध हो/तोड़ किनारे
गर्जन करता
बढ़ता खेतों ओर/दाहिने भी बांयें भी
सर से समुद्र बनने की चाह लिये
यह महापद्मसर

इसकी ऊंची और भयानक
लहरें कैसे/अपनी चपेट में ले
अररा कर/गिरा रही
कोठारों/गोशालाओं/और घरों को
पल भर में ही
बहा दिये/सब पौघे/पेड़
फसलें/हल/बैल/बछड़े
अनेकों गायें
बच्चों बूढ़ों/और जवानों को भी
लहरें ऊंची फेन उगलती
गरज–गरज कर आने वाली
बहा ले गई/और धकेला
भूखे यम के मुंह जैसे
अनेक भंवरों में

इस विशाल सरोवर का जल
जो कल तक मीठा था
आज अचानक बूंद – बूंद
इतना कडुवाया/कैसे ?

उधर वितस्ता/पल–पल
अपना रूप बदलती
तोड़ किनारे
खेतों – गांवों के/ऊपर से बहती
महा भयंकर अजगरनी–सी

मुंह खेले यह/ तेज़ी से बढ़
जनपद/नगर लीलने जाती
बदल चुका है दिशा
बहाव इसका/पाग़ल हो
उल्टी दिशा पकड़ ली/अब
इसने रे देखो !

बढ़ता ही जाता/पल–पल
विस्तार बाढ़ का
छोड़ नदीपन/किस कारण
गुस्सैल समन्दर
हो रही वितस्ता ?

क्या/कश्यप की पावन धरती
पूत साधना स्थली/ मुनियो की
प्रकृति सुन्दरी का मनहर
श्रृंगार–स्थल
खण्ड़ प्रलय का/ग्रास बनेगा ?
इसीलिए क्या
वराहमूल से विजयेश्वर तक
सागर यह
ऊंची–ऊंची लहरों वाला फैला ?

नया जनम लेकर आया है
क्या वह दानव

महा पातकी / क्रूर / घमंड़ी
दैत्य – जलोद्भव ?
धरती पर का स्वर्ग
हिमालय की यह घाटी
बनी हुई तस्वीर / आज है
हाय ! नरक की

पशु–मानव शव/जल – थल में
सुदूर तक फैले
कुछ सड़े/सड़ रहे कुछ/और
कुछ ताज़ा

नोच–नोच कर/मांस शवों क़ा
खाते डट कर
गिद्ध/चील/कौव्वे
और कुत्ते

कभी दूर ले जाकर/बोटी
भूखे पक्षी/डरके मारे
किसी शाख़ पर
या/ऊंचे छत पर लेजाकर
नुचते जाते/पाकर अवसर

कोई मरियल–सा भी कुत्ता
झट ले अंग लोथ का/मुंह में
ग़ायब होता

इधर – उधर हड्डियाँ पड़ी
कंकाल पड़े हैं/यहां–वहां
सूझे अध – खाये/लोथड़े सड़े हैं

फैली है बदबू
साँस लेना मुश्किल है
गली – गली/फैले अंसख्य
मक्खी–मच्छार हैं

हर घर से/ दो–चार व्यकित
रोज़ मर जाते
और महामारी की हैं
वे / भूख मिटातें
पर/न मिटा सकती/जनता
अपनी/भूख बेचारी
खेती लायक ज़मीन/डूबी है
लगभग सारी

बची हुई जो
बनी हुई वह/घोर/दलदल है
अब कृषकों का/ मज़दूरों का
क्या संबल है

अब
ख़रीद क्या करें/कि लायें

रक़म कहां से भारी
दस सौ पचास दीनार/भाव दे
मिलता धान/मात्र एक खारी*
बिलख रहे शिशु/बुरी तरह से
सूखी है/मांओं की छाती
बच्चे बिलख–बिलख रोते हैं
उन्हें भूख की पीर सताती
महिलायें विलाप करती हैं
छाती पीट
पीट सिर अपने
मर्दों की आंखें गीली हैं
बिखर गये सब/उनके सपने

ऐसा ठौर न कहीं
जहां की
हाय! हाय!! न करती माटी
त्राहि – त्राहि ध्वनि से आपूरित
आज हमालय की यह घाटी
फिर भी/जाने किस कोने में
हर मन के/इक आस छिपी है
बार–बार जो/इंगित करती
द्वार ओर है
राजभवन के

~ • ~

* "खारी" (कश्मीरी शब्द) लगभग दो मन का तौला

प्रकरण : दो

बहुत समय से
राजभवन में
घने–घने घुंघराले काले/केशों वाली
ठोस हुई/चांदनिया जैसे/चेहरे वाली
नील–कमल सी/आंखों वाली
ओसिल गुलाब की पंखुरियों – से
होठों वाली
उन्नत उरोज/पतले/कटि वाली
गहरे जल के भंवर तुल्य/नाभी वाली
पारे की तरलाई गोरी
मनमोहक नृत्य साकार स्वयं
कोई सुनर्तकी/घुंघरू बांध
जावक रचकर
राजा अवन्ति वर्मा के
रंगमहल को/अपनी थिरक
भंगिमाओं/मुद्राओं की
अमृत–वर्षा से/ भिगो न पाई

औंधे पड़े चषक
सोम – पात्र भी

कितनी बार
कविवर शिवस्वामी
कलाटभट/रत्नाकर/रमठ
आनन्द वर्धनाचार्य पधारे
पर/मूक रही कविता
त्रिक–चिन्तन– चर्चा
क्योंकि सभी को/रखा व्यस्त
बाढ़ और/इससे हुई
समस्याओं के
समाधान की/खोजों ने ही

मंत्रिगणों औ' 'सभासदों के साथ
रोज़ ही
महाराज/विमर्श में जुट जाते
पर/एक बिन्दु पर/सारा विमर्श
समाधान सारे/व्यर्थ–से लगते

राजा/पंड़ित/मंत्री गण
तथा सभासद सभी
किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाते

शयन–कक्ष में/शैय्या पर भी
करवट बदल–बदल कर राजा
इसी सोच में डूबे रहते
'कैसे इस चढ़ते/हहराते

लघु सागर का/पानी उतरे

कैसे/किस उपाय से
जनके मन में
हौआ जो घर कर बैठा
हौआ निरा/निरा हौआ ही
उनको भी/लगने लग जाये

बाढ़ नहीं यह महाकाल का रूप/क्रूतम
छीन गया/जीवन का आधार/अन्न
अन्न उपजाने वाली/खेती
बहा लिये/किसान कितने ही
भूजीवी के/प्राणों से भी प्यारे
बैल/कामधेनुएं
भविष्य की आशायें/शिशु/बच्चे
कितने वृद्ध/अबलाएं
और दे गया/ भीषण महामारी
अभाव/भूख/मूल्य-वृद्धि
महाकष्टकर

मेरी प्यारी प्रजा
असहाय दीन हो/सिसक रही/टुकुर-टुकुर
सूनी आंखों ताक रही
निपट अनाथ-सी

धिक्कार मुझे/कैसा नृप मैं
मैं कैसा प्रजापाल
असमर्थ/विवश/लुंजपुंज-सा

अपनी आँखों जो देख रहा
महानाश
अपने जन/अपनी माटी का

सन्तान तुल्य है प्रजा/पिता राजा
है धरिनी/प्यारी माता ही
महा विपद में/जीवन को/सब
जूझ रहे

मैं/कुछ करने में/अशक्य
मैं कैसा पिता
मैं सुत कैसा

यह ध्वंस
मृत्यु का महाताण्ड़व
क्या जाने
हमें ले जाए कहां
शिव हे/उभारों संकट से
तज के/अशिवता/नदी वितस्ता
वरे निरन्तर/फिर से शिवता'

ऐसे ही कितनी उधेड़बुनों से गुज़र
महाराज अपनी शैय्या पर/उठ बैठे
लेटे/उठ बैठे
होठों पर
आहों के सौ–सौ तूफान लिये

परिचित थी/देश–दशा से

पति की मनोदशा से/रानी
कैसे सो पाती/उठ बैठी वह भी

और पास आकर
कमल कोमल हथेलियों में
पूरा प्यार भर कर
धीरे–धीरे
अपने प्यार का माथा
सहलाते बोली
'स्वामी/प्रजाजनों के/आप
अटूट विश्वास
अपने से अधिक/स्नेह करते/वे
आपको/सुयोग्य/बलशाली/प्रजापाल मानते
फिर भी क्योंकर/अपने हृदयों में
मिथ्या संशय पाले हैं
आपके/खंड़न करने पर भी/उसे
विदा नहीं कर पाते'

'प्रिये/मन में/जनके
जो बात/बहुत गहरे पैठी हो
उसे मिटाना/बहुत कठिन है
तिस पर यदि/मन में/बुद्धी में
यह बात घर कर गई/कि अमुक स्थान पर
जाना/निश्चित है/प्राणों को खोना
तो
उसे भगाना/और भी दुस्तर
निश्चय है उनको/उस रात
वराहमूल के निकट/यक्षदर गिरि से

चट्टानें जो खिसक
वितस्ता धार
अवरुद्ध कर गई
उसका कारण
भूड़ोल नहीं
एक महा दैत्य था
जो चट्टानें खिसका
तरंगिनी के तल में
छिप कर बैठ गया

आसपास के वासियों
या/पास पानी के जो जायेगा
उसे/यह दैत्य भयंकर/निस्संशय
अपना ग्रास बनायेगा

वराहमूल से
यक्षदर गिरि तक
और आसपास
ग्रामों के वासी भय से
दूर/बहुत दूर के ग्रामों में/भागे'

'प्राणेश/उपजता बार–बार
मन में/यह संशय
वर्तमान स्थिति का/लाभ उठाकर
राजद्रोह करने वाले
और असामाजिक तत्व आदि
जिनका आपने/अतीव दृढ़ता
बुद्धि बल द्वारा

दमन किया था
कहीं उन्हीं का
शेष बचा/कोई वंशज/आपका
दिन–प्रति–दिन/बढ़ता प्रताप
शक्ति/प्रबन्ध–पटुता
लोक प्रियता देख
ईर्षावश/जनता को
पथ–भ्रष्ट न कर गया हो
क्योंकि
लांघ सकता/कोई भी सीमा
महापातकी/कुधी देश द्रोही'

'जनता का/जब तक/साथ रहेगा
नहीं वरेगे/जब तक
राज–पुरुष/भ्रषृता
तब तक
कोई भी षड्यन्त्र/शत्रु का
सफल नहीं होने का/किन्तु
तुम्हारे मन में उपजे/संशय को
वृथा भी नहीं कहूंगा
अपने पर विश्वास ठीक है
पर
अति/हर कहीं/वर्जित है

शत्रु को/ शत्रु की चालों को/मटियामेट करो
साथ ही
क्षण – क्षण यह भी/मन में हो
मिटते नहीं/समूल शत्रु कभी

इसीलिए एक और मंत्र/नीति का
सतत सर्कता

वर्तमान क्षण
नहीं मांगता/यह चर्चा
यह क्षण
विमर्श का/निर्णय का
स्वदेश/स्वदेश की जनता की
रक्षा का
उनके अश्रु पोंछने का
जनको/निर्दिष्ट स्थल पर/जाने को
सहमत–उद्यत करने का
उनके हृदयों से/भय–संशय का भूत
छूमन्तर कर/फिर से/विश्वास जगाने का
कुछ करने का/कुछ करने का

'कैसे?'

'इस कैसे की/खोज ही
महा विकट/इक प्रश्न बना
जो/विषधर–सा/सम्मुख मेरे
खड़ा
तना'

~ • ~

प्रकरण : तीन

'राजराजेश्वर!
श्रीनगर के राजपथों पर
जब भी कोई/जनमण्डली
बाढ़ों की चर्चा करती
या/इसी विषय पर
विद्वानों की गोष्ठी होती
तो/एक युवक/कृषकाय
तार–तार पट ओढ़े
कहता फिरता
इस गुत्थी को सुलझाने की
मेरे पास बहुत है बुद्धी
पर/मैं/साधनहीन
करूँ क्या

उसकी इन बातों को सुन कर
लोग प्रतिष्ठित
विद्वान कई भी

हसते/और उसे
सनकी/वातुल
अज्ञात कुल–गोत्र
नीच जाति का/अपितृ–अमातृक
और न जाने क्या–क्या, कह
उपहास उड़ाते

गुप्तचरों की बातें सुनते
महाराज गम्भीर हो गये
उनके कुम्हलाये चेहरे पर
फिर से
आभा की/ झलक–सी छाई/ बोले–
'कृषकाय युवक/यह कौन
किसका जाया
करता क्या है
रहता कहां
तत्काल मुझे
सब कुछ बतला दो
अगर नहीं हो किया पता/ तो
अविलम्ब जाओ
जाकर
पूरा व्योरा लेकर/ आ जाओ'

'भूपचूड़ामणि!
हो आज्ञा तो
सारा भेद
छानबीन से
प्राप्त हुआ जो

स्वामी के समक्ष रखते हैं'

'आज्ञाा है/अक्षरशः पूरा वृत्त
मुझे/बतलाते जाओ'

'अन्नदाता हे!
यहीं इसी नगरी में
घासफूस की/जीर्ण कुटी में
नारी एक दीन रहती है
मैला ढ़ोना/पथ बुहारना
धंधा उसका
नाम बताती अपना सुय्या

सुय्या अरुणोदय से पहले
एक दिवस
अति तन्मयता से
झाड़ू मार रही थी
पथ पै
तभी उसे/उस छोर/बड़ा–सा
मिट्टी का/इक बर्तन दीखा

मृदापात्र का
जिज्ञासा वश/उसने
ढक्कन हटा दिया जब/तो वह
स्तंभित – चकित रह गई
मिट्टी के इस/वृहद् पात्र में
प्यारा कोमल औ' नन्हा सा

एक मृगेक्षण/सुन्दर शिशु
लेटा था
जो
अंगूठा/अपने कर का
चूस रहा था

सुय्या ने/ तत्क्षण ही समझा
किसी विवश हतभागिन/मां ने
अपनी ममता की हत्या कर
दृग–तारे को
निज प्राणों से भी प्यारे को
अपने हृदयखण्ड़
दुलारे को
ऐसे/इस मृत्पात्र को दिया
और रखा भी सड़क–किनारे
जिससे/कोई पथिक
ऊषा की पहली रश्मि संग ही देखे
और उठा कर/पाले–पोसे

सच है
कोई मां/कैसे भी
अपनी ममता को मारे
पर न कभी/ममता मरती है
निस्संशय ही
रूप दूसरा
तत्क्षण वह धारण करती है
ज़ब यह मनहर शैशव निरखा

सुय्या ने
तब उसके उर से
वत्सलता का/सोता फूटा
आँखों में
वह/निर्मल भोला
रूप बस गया
एक निपूती नारी के
अन्दर की मां ने
अंगड़ाई ली
उसे लगा
छाती से उसकी
पय धाराएं
फूट रही हैं
हाथों को आगे कर/उसने
शिशु को उठा लिया हौले से
फिर अपनी छाती से जोड़ा
चूमा
और झुला बाहों में
फिर से चूमा
फिर–फिर चूमा

फेरा हाथ
भाल पर उसके
हल्के – हल्के
और/अनायास ही

फूटे बोल

जिह्वा से उसकी
'बलिहारी मैं/बेटे मेरे......'

अपने पट की ओट रखा/औ'
अपने सीने से चिपकाया

उसे लगा उसक्षण/पाया है
त्रिभुवन का साम्राज्य
उसी ने

बहुत–बहुत हो सावधान
द्रुत क़दम बढ़ाते
शिशु को निज कुटिया पहुँचाया

स्वेद नहीं
अपने शरीर का
बूंद–बूंद कर
खून बहा
रात और दिन
परिश्रम करके
बालक का
पय–अन्न जुटाया
अपना सारा स्नेह दे दिया
वारा जीवन पूरा–पूरा

सुय्या–पोषित होने से ही
यह बालक/सुय्य कहलाया
यथासमय/सुय्या

प्रिय सुय्य को
सबसे अच्छे
उपाध्याय के पास ले गई
विद्या–अर्जन इसे कराया
ज्ञानी से ज्ञानी पंड़ित से
ज्ञान वास्तविक
इसे दिलाया

बालक भी
विचित्र प्रतिभा का
स्वामी निकला
अपनी कुशाग्रता से
अपने गुरुओं को
अति ही विस्माया

सिद्ध कर दिया
ऊंच – नीच का भेद
पात्रता नहीं जानती
नहीं जानते जाति–भेद
सच्चे पंड़ित भी
वे तो केवल
शिष्यों का
संकल्प/परिश्रम/लगन जानते

कर किशोर अवस्था पार
युवावस्था में आ कर
हर विद्या में
पारंगत अति
सुय्य हो गया
किसी गृहस्थ के बच्चों को/अब

सुय्य पढ़ाता/और इसी से
अपनी मां का/अपना
भोजन–वस्त्र जुटाता

अध्यापन/स्वाध्याय
और माता की सेवा
इन कामों में ही
वह अपना समय बिताता'

जाने की आज्ञा दे करके
गुप्तचरों को
राजा अवन्ति वर्मा
फिर कुछ क्षण
चिन्तन में डूबे

दूर बहुत ही दूर
उन्हें चिन्ता ले पहुँची

लौटे/तो
तुरन्त एक चालक बुलवाया
आज्ञा दी
'कल प्रातः ही तुम
सुय्या की कुटिया
वाहन ले कर जाना
और वहां से
सुय्या–पुत्र
सुय्य को
दिन के द्वितीय प्रहर तक
अति सम्मान सहित
लेकर के/आजाना

~ • ~

प्रकरण : चार

बूढ़े बंजर पर ज्यों
एक साथ ही
और अचानक
सौ–सौ गुलाब
शबनम से भीगे
अपनी मुस्कानें लिख जायें
रूखे फटे
झील की तल से
पानी फूटे
कुम्हलाये कमलों को
आकर
नई ज़िदगी
गले लगाये
बता रहा था/चेहरा
राजा का
इससे भी कुछ ज़्यादा
जब वे

सुनकर बातें
विश्वास – भरी
गंभीर
अंहकार से मुक्त
युवक सुय्‌य की
मौन हो गये
गुनी/कई कोणों से/परखी–जांची
मन ही मन
इस बहुत सयाने
नौजवान द्वारा प्रस्तावित
बाढ़ रोकने की
योजना अनोखी

उनके
मन के पर्दे पर/उभरी
तटबन्धन में
कल–कल करती/नदियां
झीलें/मर्यादित
खेत हरे/खलिहान भरे
हसते भरे–भरे से चेहरे
स्वस्थ धेनुएं/पुष्ट बैल
फलों से लदी–झुकी/टहनियां हज़ारों
हरे घने/गन्धाते उपवन
लोक–गान–नृत्यों में डूबी
किसान बालाएं
किलकते बच्चे
लाल–लाल कपोलों वाले
बोले

'युवक/तुम्हारी यह योजना
स्वीकार हमें
धन्य तुम्हारी मति
अब कार्यरूप दे दो/सोचे को'

'धन्यवाद राजन्
जाने से पहले
कह दूँ दो टूक
कि कोई भी
मंत्री/विशेषज्ञ/सभासद–अधिकारी
यहां तक कि/स्वयं आप भी
हस्तक्षेप नहीं करेंगे/कार्य में/मेरे

दे देंगे/उतना–धन
जब–जब जितना भी मांगूं

यह मेरा है वचन
कि वश कर दूंगा
नदियों को ऐसे
अश्वारोही कुशल
एक ही झटके से
वल्गा के
वश कर लेता
अड़ियल–बिगड़े घोड़े जैसे'

'साधुवाद/मतिमान युवक
ऐसा ही होगा
कोषपाल को बुलवा कर

हूँ आज्ञा देता'

मटमैली औ' फेन उगलती
अति विशाल
उस महाराशि की
लहरों के
बहुत कठोर
आघात झेलती
डगमग होती
ऊपर उठती/नीचे गिरती
नौका एक डगरती आई
उस स्थान तक
जहां सुय्य थे खड़े
बहुत बड़ी धनराशि लिये
कब से
उसकी बाट जोहते

पहले
धन से भरे पात्र
उचित जगह पर
रखवा
स्वयं नाव में उतरे
दे निर्देश नाविकों को सब
विदा किया
साथ आये जो
राजपुरूष थे
कुशल नाविकों से संचालित/नौका
जूझ–जूझ कर

बना–बना पथ
पर्वत जैसी लहरों के ऊपर से
बढ़ती गई
नगर के/दक्षिण ओर
धीरे–धीरे/संभल – संभल के
ज्यों बाधाएं लांघ–लांघ कर
आगे ही आगे बढ़ता हो/लगातार
फौलादी निश्चय

मड़व राज्य के नन्दन में
जब/पहुंची नौका
एक पात्र/जो भरा लबालब
सोने की मुद्राओं से था
उठा हाथ में
पानी में/सुय्य ने फैंका

कहा मांझियों से
अब नौका/क्रमराज्य में
खे ले जाओ
ध्यान रहे पर पूरा–पूरा
उत्तर ओर हमें है जाना
अपने प्यारे नगर/सुन्दरतम श्रीनगर के

संघर्षो से घिस–घिस जीवन
बहुत–बहुत चमकीला बनता
सहकर के चोटों पर चोटें
अपना मैल सभी खो देता
ऐसे ही यह नाव

तरंग–थपेड़े सहते
पहुंच गई उस जगह/जिसे
यक्षदर कहते

बार–बार/अंजलि में अपनी
मुद्राएं भर
गये डालते/सुय्‌य
हस–हस कर
पानी के अन्दर

रहा देखता
आंखें फाड़े
मंत्रमुरध–सा
रह–रह कर
यह दृश्य अनोखा
खेने वाला दल
उस/किश्ती का

~ • ~

प्रकरण : पांच

पानी में धन कहां–कहां पर फैंका
बर्तन सहित/या अंजलि भर–भर मूर्ख युवक ने
सुना मांझियों से सब व्योरा
सभासदों ने/अन्यों ने भी
आस–पास जो खड़े वहां थे

गये सभासद राजभवन
राजा से मिलने
कहा कि 'स्वामी
बुद्धि सुय्य् की देख लीजिए
सारा धन/जो
कोषपाल ने उसे दिया था
प्लव को / अपने हाथों
अर्पित कर आया है/उन्मन

हम तो पहले ही कहते थे
नीच कुलोद्भव

चाण्ड़ाली का पुत्र/सुय्य/
महापाग़ल है
सनकी/मन्दबुद्धि/वातुल है
और कुपोषित/अस्थि शेष/अप्रिय
अस्थिर है'

राजा ने मतलब जल्दी
समझा शब्दों का
बोले हसी दबा
'आप सब का मैं/आभारी हूं
देखूंगा धन नहीं बहाया जाये/ऐसे
आप सभी/जाकर/अपने–अपने घर
विश्राम कीजिये'

उधर/अकाल–पीड़ा से पीड़ित
गांवों के लोगों में
फैली ख़बर
धन बहुत ज़्यादा है
पानी के नीचे
दौड़े वे/पर पहुंच ठौर पर
खड़े रह गये
मंत्र कीलित से
सूनी आंखों/एक दूसरे को ही तकते

सबको डर ने/घेरा था
अन्दर ही अन्दर
यहीं दैत्य वह/रहता है
पानी के अन्दर

खाता है वह/मांस मनुष्य का
बड़े चाव से
पानी में डुबकी तो मारे
पर/कैसे!

इतने में साहस बटोर
कमज़ोर मगर हिम्मत वाले
इक जवान ने/जिसको
जिसके घर वालों को
मिला नहीं था कुछ भी
खाने को/कई दिनों से
मारी छलांग/पानी में
कई क्षणों के बाद
निकल आया वह ज़िन्दा
मुट्ठी में/चमकीली कुछ मुद्रायें ले

देख इसे/बाक़ी जवान भी
जो अब/दुखी बहुत थे
अकाल के/बहुत सख़्त
कौड़े खा–खा के
पानी में/झट कूदे
और/लगे खोजने/निर्भय होके
सोने की मुद्रायें/तल से

पहचाना अपने को
छोड़ दिया जब डर/शक/जड़ता
दिखा गई पथ
युवाशक्ति

सबको
शिवता का :

यही शक्ति है शक्ति
करे/असंभव संभव
यही शक्ति है शक्ति
रचे जग/नूतन अभिवनव

इसी जगह/चट्टानें गिर आई थीं भारी
रोक रहीं थीं यही राह
सारी की सारी

इसीलिए ही
क्रूर बनी थी/शान्त वितस्ता
झेल रहे थे/बच्चे–बूढ़े
गुस्सा इसका

सच/जब–जब भी
यह प्रवाह/अवरुद्ध हुआ है
तब तब केवल
नाश–नाश/बस नाश हुआ है

मुद्रा खोजी हाथ/सैकड़ों
लगे हटाने
कंकर–पत्थर और बड़ी भारी चट्टानें

तीन दिनों तक
इसी तरह से/रहे खोजते

सोने की मुद्रायें
युवा गांव के/बड़ी लगन से

उन्हें मिली मुद्राएं
औ' अवरोध हट गया
रुकी हुई धारा को/फिर
खूब/प्रवाह मिल गया

प्रसन्नता से खिलने लगे/मुर्झाये चेहरे
धन्य सुय्य की सूझ/कहा/एक हो
हर ज़बान ने

गर थे दुखी/कि बस वे चुग़लखोर थे
फ़क थे चेहरे/बेचारे
उन सभासदों के

पानी रुके वितस्ता का
इसलिए सुय्य ने
बांध पत्थरों का बनवाया
आरपार से
जहां कि डाली पहले थीं
असंख्य मुद्रायें
उसी जगह से लगभग
पौन–आध/कोस–सा आगे

सात दिनों में
बांध हुआ यह बिलकुल पूरा
और रुक गया

उसके पीछे/पानी सारा
नदी पाट से हटवाई
कीचड़–बालू सब
खूब हुआ गहरा/निचला
नदी–भाग अब

फिर/बनवाये दोनों ओर
तटबन्ध सुदृढ़तम
जिससे/स्खलित पत्थर
पानी में/गिरें न हर दम

हुआ काम जब पूरा
तो/बांध खुलवाया
रुका हुआ पानी
तेज़ी से
आगे धाया

ऐसे/जैसे हिरण भागते
सिंह देख कर
या अपनी ओर सधे देखकर
अति पैने शर

बहा ले गई धार
गंदगी/जो छाई थी
खड्डों में का/रुका पड़ा
बासिल पानी भी
सड़ा मांस
जो अलग हुआ था/कंकालों से

सड़ी मछलियां
सांप/लत्ते/फूटे बर्तन
लिजलिजी टहनियां
गले/ढेरों पत्ते
उखड़े पेड़ समूचे
सागरभर बदबू
और न जाने क्या – क्या

पानी के बह जाने पर
जो धरती निकली
थी वह अभी नहाई
गदराई/तरुणी–सी
सुथरी–निखरी

घाटी के कण–कण से/अब
मिट गई मलिनता
एक बार फिर
छाई वह/अनुपम मनहरता
एक बार फिर
बही हवा वह
सुथरी–सुथरी
चमकी किरण–किरण
मौसम ने करवट बदली

~ • ~

प्रकरण : छह

धूम–धूम कर घाटी भर में
इसका पता लगाया
कहां तोड़ती नदियां/तट
लिखने को/वह बरबादी
यह निश्चित कर/सुधी सुय्य ने
नहरें/बहुत खुदवाई
ताकि बाढ़ के समय
अधिक जल
इनसे बह कर जाये

अपनी मिट्टी का प्यार बहुत
जिसके सीने में रहता
वह निश्चय
उसकी खातिर
सुखद कार्य ही करता

इस प्रबुद्धतम/अभियन्ता ने

कुछ प्रवाह भी मोड़े
कहां बने सुखकर संगम
कर विचार/फिर जोड़े

बायें बहती सिन्धु नदी थी
दायें नदी वितस्ता
एक ठौर त्रिगाम नाम से/जो था जाना जाता
यहीं/वैन्यस्वामी मंदिर के/पास
मिलन था इनका

दोनों नदियों के प्रवाह को
अभियन्ता ने बदला
और कराया संगम इनका
उस प्रसद्धितम थल में
परिहासपुर नाम जनता में
जिसका/अति प्रचलित था
चूंकि शारदा मां का इस पर
बहुत–बहुत अनुग्रह था
इस कारण यह गांव
शारदापुर से भी/अभिहित था

किया निरीक्षण
महापद्म सरोवर का भी/सुय्य ने
कौन भाग इसका गहरा है
यह भी पता लगाया

यहां वितस्ता का प्रवाह/जल्दी
आसानी से पहुंचे

इसीलिए दोनों पुलिनों पर
पाषाण बांध बनवाये

चली गई इनकी लंबाई
सात–सात योजन तक
इनमें बद्ध प्रविष्ठ हो गई
महापद्म में सरिता

इससे/नदी वितस्ता
और महापद्म सर पानी
बहने लगा नियन्त्रित होकर
छोड़ सभी मनमानी

सुचारुता के लिए ज़रूरी
एक नियंत्रण होता
बेलगाम का मतलब
संकट, बरबादी औ' बाधा

गांव सुरक्षित रहें/बसे जो
निकट महापद्म सर के थे
यही सोच अभियन्ता ने दृढ़
गोल बांध बनवाये

गोलाकार बांध को कुण्डल
कहती थी तब जनता
इनसे खूब श्रृंगार हुआ
उस उपजाऊ मिट्टी का
निकली थी जो/जल बहने से

यहां/और नन्दन में
अधिक भूमि मिल गई/यहां के
कृषकों को अति उर्वर
दूर भगा उनके सीनों से
अब/अभाव का वह डर

फिर/उन सभी स्थानों का भी
सर्वेक्षण कर डाला
जहां कि बारिश कम होती थी
पड़ता सूखा ही था
नहरें खुदवा
उन जगहों तक/पानी को पहुंचाया
तभी हमारे अभियन्ता ने
तनिक चैन था पाया

मिट्टी लेकर गांव–गांव की
उसको जांचा परखा
देखा
उस मिट्टी में कब तक
पानी रह सकता है
जान/तभी निश्चय कर पाये

किस मात्रा में जल दें

कब दें/कैसे किस मिट्टी को
यह निर्णय कर डाला

नदी विस्ता और अनूला आदि
अन्य नदियों से
कटवा दी नहरें अनेक
जल/गांव–गांव में पहुंचा
मिला सभी प्यासों को पानी
खेत–खेत हरियाया
हर किसान का चेहरा
सुरभिल/कमल बना/मुस्काया

~ • ~

प्रकरण : सात

धरती माता की संवार को
चले किसानों के दल
आगे–आगे बैल/और खुद
कांधों पर ले कर हल
जुटे काम में सब उछाह से
अहोरात्र नर नारी
हरियाये सब खेत
लहकती दीखी/क्यारी–क्यारी

समय हुआ तो खेत–खेत में
चमकी स्वर्णिम आभा
वह भी पहले से दुगनी
और कहीं पर ज़्यादा

कब से जिस अकाल ने यहां
था निज डेरा डाला
सिसक–सिसक कर भाग गया लो

ले के/वह मुंह काला

आया बड़े ठाठ से धरता
अपने क़दम/सुकाल
जन–जन को हर्षाता
द्युतिमय स्वर्ण मुकुट धर भाल

निकले राजा अवन्ति वर्मा
प्रजाजनों का हाल
स्वयं जानने/संग लिये सुय्य
जनके मन के लाल

घूमे जनपद–जनपद/घूमे
गांव–गांव हर ठौर
देखी आती विभव–सवारी
गई नज़र जिस ओर

किया अपूर्व उत्साह से स्वागत
जनता ने दोनों का
जगह–जगह उनने महसूसा
मोद मुदित हर मन था

'जय–जय कश्मीराधिप जय–जय
कृषक–बंधु सुय्य जय–जय–जय'
हर ज़बान पर यही घोष था
यह संगीत यही थी लय

अन्न सभी को सुलभ हो गया

कितना भी निर्धन हो
क्योंकि छह–गुना भाव गिर गया
मिली तृप्ति भूखों को
जो खारी सुकाल में मिलती थी
दो सौ दीनार
छत्तिस दीनारों में मिलता/अब
उतना ही भार

नहीं कहीं पर चिन्ह मिल रहा था
अभाव का
पूरी तरह राज/राज्य में था
समृद्धि का/सुख का

सब लेखनियां/और तूलिकायें/छेनियां/हथौड़े
सरगम–घुंघरु/हाव/मुद्रायें
हुई कार्यरत फिर से

एक मनोहर बांक
वितस्ता की/राजा को भायी
जो थी/दक्षिण–पूर्व नगर के
मंजुल–सी सुखदायी
दूरी श्रीनगर से लगभग
इसकी/चार योजन थी
हरक्षण हसती यहां प्रकृति थी
मंद सुंगध पवन भी

यहां बसाई महाराज ने
नई भव्य रजधानी

इन्द्रपुरी क्या थी
भरती थी/इसके आगे पानी

इसका नाम रखा अवन्तिपुर
जनने अति श्रद्धा से
बहुत–बहुत ही जो कृतज्ञ थे
प्रजापाल राजा के

यहीं स्थापित हुए
अवन्तीश्वर, विजयेश, त्रिपुरेश्वर
अवन्ति स्वामी, भूतेश नाम से
जगत् पिता के मन्दिर

ये मन्दिर थे/वास्तु शिल्प की
वे अनन्य रचनायें
जिनके आगे सभी शैलियां
इसकी/शीश झुकाएं
इनके लिए शब्द भव्यतम
बहुत–बहुत बौना है
इक अचरज ही/इनका होना
इस जग में होना है

इनके अन्दर की प्रतिमाएं
मन में बस जाती थीं
सृष्टा की मूर्तियां न वें थीं
स्वयं सृष्टिकर्ता थीं

गूंज रहे थे यहां हर समय

वेद–मंत्र/औ' स्तुतियां
घड़ियालों–गण्टाओं
औ' शंखों की पावन ध्वनियां

दूर–दूर को महकाती थी
अगरु–धूप सुवास
यही–यही वैकुण्ठ धाम है
होता था आभास

धन्य हुई घाटी कश्यप की
महाराज वर्मा पाकर
महा धन्य यह हुई
सुय्य सा पा उत्तम–पावन तम वर

करते सुय्य की चर्चा
जन थे नहीं अघाते
विद्वान लोग अवतार कई
इनमें थे पाते
कोई इनको
रूप दूसरा मान रहा था
प्राणों के आधार
अन्नपति जगदीश्वर का
कोई लोकोत्तर कह
इनका मान बढ़ाता
कोई कहता
ऋषियों की धरती का त्राता
कइयों ने इनमें साक्षात
विश्वकर्मा ही देखा

जिसने फिर से
धरास्वर्ग भूस्वर्ग बनाया

जो भी हो
पर सिद्ध कर दिया/सुधी सुय्य ने
कुछ भी टिकता नहीं/कभी
आगे निश्चय के

नहीं बपौती होती
प्रतिभा किसी वर्ग की
प्रज्ञा तो प्रज्ञा है
बनकर रही न बांदी

ऊंच–नीच का भेद
मनीषा को/कब भाता
खिलता स्थल गुलाब
पानी में कमल सुहाता

सच्चा यश, सम्मान, प्यार
मिलता करनी को
नहीं देखते ये
धन/अथवा निर्धनता को

जहां गये सुय्य
सब ने/पलकों पर बैठाया
इन्हें देखने/जनसागर
उमड़ कर आया

पा जनप्रियता/नहीं गहा पर/अंहकार ने
हुए अलग क्षणभर भी
कभी न विनम्रता से

सुय्य की पूजा
और साधना/सतत यही थी
सेवा करना
मातृ–भूमि की/मां की
अमर रहे युग–युग तक/स्मृति
मां सुय्या की
रख दी नींव/शुभ वेला में
सुय्या कुण्डल की
और दे दिया दान गांव यह
उस सपूत ने/श्रेष्ठ द्विजों को
हर्ष सहित सच्ची श्रद्धा से

बनवाया फिर एक नदी पर
पुल सुंदर–सा
मां को अर्पित कर इसको
सुय्या–सेतु/नाम रख दिया

जब तक है संसार
रहेगी कीर्ति सुय्य की
पूरी धरती पर/जगमग होगी
सूर्य–किरण–सी
इस उपकारक देश बन्धु की
करनी स्मरें
हर क्षण हर युग/वासी सब/कश्मीर धरा के

अलग हो रही महापद्म सर से थी
जहां वितस्ता
वहीं कर दिया/शिलान्यास
इक नव जनपद का

सुय्यपुर नाम रखा/इसका
अति कृतज्ञता से
आभारी थे जन
अपने प्रिय उपकारक के

उपजाऊ थी भूमि बहुत
इस नवजनपद की
इस कारण/जल्दी-जल्दी
आबाद हो गई

'यहां न मारेगा कोई
मछली या पक्षी'
सब के लिए समान आज्ञा थी
जनता की

ऐसे/परम्परा वह फिर से
प्राण पा गई
परम्परा जिसको कहते
अभयारण्यों की

~ • ~

आज भी

कितने यक्षदरों से खिसकीं
खिसक रहीं
भारी चट्टानें
इतना पानी बहने पर भी
रुद्ध प्रवाह
वितस्ताओं के

भटक रहे हैं
राजपथों पर
कितने ही सुय्य
'पाग़ल–सनकी'
'धीरस्ति में निरर्थस्तु
किं कुर्याम'

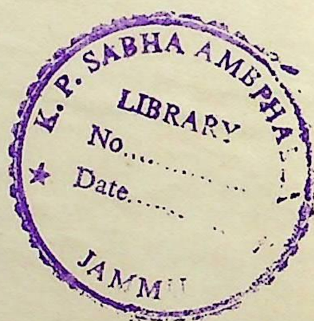
कहते सुने जा रहे
आज भी

कब तक/आखिर बोलो कब तक
रहें प्रतीक्षारत
ये सारे
सुन लेगें क्या
अवन्ति वर्मा?

कौन कहे
कैसे यह· जानें

~ • ~





'मधुप' ने सुय्य के मिथक को लेकर वर्तमान स्थितियों को आधार बना प्रस्तुत खण्ड़काव्य की रचना की है। प्रतीकात्मक आधार पर नवीं शताब्दी की स्थितियों को सार्थक रूप से उभारा गया है पर वर्तमान अतीत में डूब गया है। मैं तो वर्तमान को अतीत की इन पंक्तियों में देखता हूँ :

धरती पर का स्वर्ग
हिमालय की यह घाटी
बनी हुई तस्वीर/आज है
हाय! नरक की

फैली है बदबू
सांस लेना मुश्किल है
गली गली/फैले असंख्य
मक्खी मच्छर हैं

यह अतीत नही वर्तमान का यथार्थ है। जो स्वर्ग कभी मन्न को भिगोता था सराबोर करता था अपनों को अपनों से मिलाता था। वही आज़ कैसा हो गया है। सडांध टूटते रिश्तों की और धार्मिक अन्धता की इन्सानियत के दुश्मन को मक्खी मच्छर के प्रतीकों में लिया जा सकता है।

एक मुद्दत के बाद एक अच्छा खण्ड़ काव्य पढ़ने को मिला है। वह भी परम्परा से हटकर–स्वछन्द काव्य धारा में।

अपनी मिट्टी से अलग होकर जीना बड़ा कठिन होता है, धरती की खुश्बू नास्तेलजिया की सीमा तक बांध देती है। न चाहकर भी हम पीछे लौट जाना चाहते हैं। इतिहास के एक पात्र, सुय्य के माध्यम् से अतीत और वर्तमान में एक सेतु स्थापित किया गया है जो मिथक का कार्य तो करता ही है साथ ही उज्जवल भविष्य के सोपानों की ओर भी संकेत करता है। कोई तो सुय्य फिर जन्मेगा और अपनी प्रज्ञा से नदी का रुका, गंदा जल एक बार फिर प्रवाह में ले आएगा और नदी की धारा जींवत हो उठेगी।

–डॉ॰ अशोक जेरथ



जन्म तिथि : १६ अप्रैल, १६३४ जन्म स्थान : कश्मीर

...कश्मीरी तथा हिन्दी दोनों भाषाओं के समान रूप से सुविज्ञ विद्वान, कवि, गद्यकार, सम्पादक पृथ्वीनाथ मधुप विगत चार दशकों से कश्मीरी तथा हिन्दी की सेवा में संलग्न हैं। एक अध्यापक के रूप में जीविकोपार्जन प्रारम्भ करते हुए श्री मधुप ने श्रीनगर (कश्मीर) के कई प्रतिष्ठित शिक्षा संस्थानों तथा केन्द्रीय विद्यालय संगठन, नयी दिल्ली द्वारा संचालित जम्मू कश्मीर, उत्तर प्रदेश तथा हिमांचल प्रदेश के कई केन्द्रीय विद्यालयों में शिक्षण कार्य किया। श्री मधुप, अध्यापन एवं साहित्य–सृजन की संयुक्त धारा साथ–साथ प्रवाहित करते हुए अपनी प्रखर सुजनधर्मिता के कारण राष्ट्रीय स्तर पर सारस्वत महिमा से मण्ड़ित हैं।

श्री पृथ्वीनाथ की मौलिक सृजात्मक उपलब्धियों में वे **मुखरक्षण, खोया चेहरा, खुली आंख की दास्तान**, तथा **'बबूल के साए में मोगरा'** आदि (सभी काव्य ग्रथ) **'कश्मीरियत : संस्कृति के ताने बाने** (गद्य–रचना) उल्लेख्य हैं। काव्य कृति **खुली आंख की दास्तान** जम्मू कश्मीर कला संस्कृति एवं भाषा अकादमी द्वारा पुरस्कृत है। 'कश्मीरियत : संस्कृति के ताने बाने' नामक पुस्तक प्रान्तीय अकादमी (तथा केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार) द्वारा पुरस्कृत है।

श्री मधुप की यशः कीर्ति के प्रसार में उनके अनुवाद कार्य का विशिष्ट योगदान है। कश्मीरी के शीर्षस्थ भक्त कवि परमानन्द की श्रेष्ठ कविताओं का चयन एवं उनका हिन्दी अनुवाद 'कवि श्री मालाः परमानन्द' के नाम से प्रकाशित है। कश्मीरी की लोक कथाएं शीघ्र प्रकाश्य है। यह श्रमसाध्य कार्य श्री मधुप के कठिन अध्यवसाय हिन्दी के प्रति अपूर्व निष्ठा तथा लगन का ही प्रतिफलन है। इन अनूदित कृतियों के माध्यम से हिन्दी भाषा भाषी, कश्मीरी लोक संस्कृति भाषा तथा कश्मीरी रीति–रिवाजों से परिचित हुए है और कश्मीरी भाषा–भाषियों में हिन्दी के प्रति रुचि जगी है। श्री मधुप की बहुआयामी रचनाधर्मिता साहित्य के सृजन मात्र से संतुष्ट नहीं हुई फलतः सम्पादन तथा पत्रकारिता के क्षेत्र में भी वे सक्रिय रहे। **'गल्प सौरभ'** नीलजा (प्रथम तरग) एवं **'कश्यप भारती'** के सम्पादक/सह सम्पादक के उत्तरदायित्वपूर्ण पद को सम्भालने के साथ ही **'काऽशुर समाचार** (नयी दिल्ली), **प्रकाश** (श्रीनगर), **क्षीर भवानी टाइम्स'** (जम्मू) आदि पत्रों के (हिन्दी), **जे.वी.जी. टाइम्स** के पृष्ठों में भी वह निरन्तर लिखते रहे हैं।

अध्यापन सेवा से निवृत्त होने के पश्चात् विस्थापन की पीड़ा सहते हुए आज भी श्री मधुप साहित्य साधना में संलगन है–वह कश्मीरी तथा हिन्दी भाषाओं के साहित्य को समृद्ध कर रहे हैं। बिहार से प्रकाशित **'आज की कविताएं'** पत्रिका के विस्थापन अंक के वह अतिथि सम्पादक रहे।

(उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ द्वारा कवि को 'सौहार्द सम्मान' से समादृत करने के अवसर पर पढ़े गये परिचय–पत्र से)

सम्पर्क : ८४/सी–३, ओंम नगर, उदयवाला, पट्टा बोहढ़ी, जम्मू (जम्मू कश्मीर)